संपादकीय जागरण

मंगलवार, 12 सितंबर, 2017 : आश्विन कृष्ण 7 वि. 2074

सत्य सदैव सबसे प्रबल तर्क होता है

नाकामी की मिसाल

इससे चिंताजनक और कुछ नहीं कि जब विश्वविद्यालयों को अंतरराष्ट्रीय स्तर प्रदान करने की बड़ी-बड़ी बातें की जा रही हैं तब यह सामने आ रहा है कि लगभग अस्सी फीसद केंद्रीय विश्वविद्यालयों में शिक्षकों के आधे पद रिक्त हैं। दुर्भाग्यपूर्ण यह है कि यह कोई ऐसा तथ्य नहीं जो आज-कल में सामने आया हो। एक लंबे अरसे से इस तरह की खबरें आ रही हैं कि केंद्रीय विश्वविद्यालयों और साथ ही उच्च शिक्षा के अन्य राष्ट्रीय ख्याति वाले संस्थानों में शिक्षकों के रिक्त पदों की संख्या बढ़ रही है, लेकिन मानव संसाधन मंत्रालय में नेतृत्व परिवर्तन के बाद भी हालात में सुधार की कोई खबर नहीं आ रही है। नतीजा ढाक के तीन पात वाला ही नहीं, बल्कि उससे भी बुरा है, क्योंकि ऐसे संस्थानों की भी संख्या बढ़ रही हैं जहां कुलपति अथवा निदेशकों की प्रतीक्षा हो रही है। इससे निराशाजनक और कुछ नहीं कि मानव संसाधन विकास मंत्री के रूप में प्रकाश जावड़ेकर अपने ही आश्वासन पूरा करने में नाकाम हैं। उन्होंने इस वर्ष मार्च में लोकसभा में एक प्रश्न के उत्तर में यह स्वीकार किया था कि केंद्रीय विश्वविद्यालयों में शिक्षकों के करीब 20 प्रतिशत पद रिक्त हैं। उस समय उन्होंने इन रिक्त पदों को भरने में आने वाली कुछ समस्याओं का भी जिक्र किया था। माना यह जा रहा था कि वह इन समस्याओं के निस्तारण में व्यस्त होंगे, लेकिन केंद्रीय विश्वविद्यालयों में शिक्षकों के पद खाली होने के ताजा तथ्य उनकी नाकामी पर मुहर लगाने के साथ ही यह भी रेखांकित कर रहे कि वह समस्याओं को दूर करने के बजाय उनसे घिर गए हैं।

समस्या केवल यह नहीं कि केंद्रीय विश्वविद्यालय ही शिक्षकों की कमी से दो-चार हैं। शिक्षकों के संख्याबल के अभाव से आइआइटी और आइआइएम जैसे प्रतिष्ठित संस्थान भी जूझ रहे हैं। आखिर ऐसी स्थिति में भारतीय शिक्षा संस्थानों को विश्वस्तरीय दर्जा दिलाने के दावों का क्या मतलब? ऐसे दावे किस तरह खोखले साबित हो रहे हैं, इसका एक प्रमाण यह है कि जो भारतीय शिक्षा संस्थान में विश्व के शीर्ष शिक्षा संस्थानों में अपनी रैंकिंग बढ़ाते दिख रहे थे वे अब अपने स्थान से फिसलते दिख रहे हैं। केंद्रीय विश्वविद्यालयों में शिक्षकों के रिक्त पदों की संख्या बढ़ते जाना इसलिए गंभीर मसला है, क्योंकि इस स्थिति के लिए मानव संसाधन विकास मंत्रालय अन्य किसी को जिम्मेदार नहीं ठहरा सकता। किसी भी शिक्षा संस्थान में पर्याप्त शिक्षक न होने का मतलब है पठन-पाठन के माहौल में गिरावट आना। जैसी गिरावट केंद्रीय विश्वविद्यालयों में देखने को मिल रही है वैसी ही राज्यों के विश्वविद्यालयों में भी और इसकी एक बड़ी वजह यही है कि इन विश्वविद्यालयों में भी शिक्षकों के रिक्त पद भरने से इन्कार किया जा रहा है। केवल यही चिंताजनक नहीं कि केंद्रीय विश्वविद्यालय में शिक्षकों के रिक्त होने वाले पदों को समय रहते भरा नहीं जा रहा है। समस्या यह भी है कि शिक्षा में सुधार के अन्य मोर्चों पर भी कुछ ठोस होता हुआ नहीं दिखता। तीन साल बीत चुके हैं, लेकिन नई शिक्षा नीति का कहीं कोई अता-पता नहीं। कहना कठिन है कि नई शिक्षा नीति कब आएगी और कब लागू होगी? अगर मानव संसाधन मंत्रालय चेता नहीं तो उसका सिरे से नाकाम होना और दिखना तय है।

स्मार्ट बनाने की चुनौती

देश के प्राचीनतम शहरों में एक व प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के संसदीय क्षेत्र वाराणसी को स्मार्ट सिटी बनाने की कवायद इन दिनों तेज हो चली है। गत दिनों चार योजनाओं के लिए ई-टेंडरिंग की प्रक्रिया भी शुरू हो गई। इसके तहत पांच पार्कों का सुंदरीकरण, आठ चौराहों का जंक्शन इंप्रूवमेंट, इंटीग्रेटेड ट्रैफिक कंट्रोल सिस्टम, आवारा पशुओं के लिए कांजी हाउस का निर्माण आदि शामिल हैं। इन परियोजनाओं का डीपीआर मंजूर हो चुका है। ई-टेंडरिंग की तैयारी नगर निगम के अधिकारी कर रहे हैं।

यूं तो इस शहर से प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के चुनाव लड़ने के समय से ही इसके कायापलट की चर्चा होने लगी थी लेकिन, इस चर्चा को तब और हवा मिली जब प्रधानमंत्री बनने के बाद अगस्त, 2014 में उन्होंने जापान की यात्रा की थी, तब वहां के प्रधानमंत्री शिंजो आबे ने इस शहर का विकास क्योटो शहर की तर्ज पर करने की सहमति जताई थी। क्योटो भी काशी की तरह प्राचीनतम शहरों में से है और दोनों में कई समानताएं हैं। पार्टनर सिटी के समझौते पर दोनों देशों ने हस्ताक्षर भी किए थे। इसके बाद पिछले साल स्मार्ट शहरों की सूची में शामिल होने के बाद इस शहर के कायापलट में कोई संशय ही नहीं रह गया। यानी बनारस के दोनों हाथों में लड्डू है। शहर को नया रूप मिलना तय हो चुका है, ऐसे में शहर की धार्मिक, सांस्कृतिक, कला और शिक्षा की विरासत को संरक्षित रखते हुए इसे आधुनिक चोला पहनाने की चुनौती बहुत बड़ी है। कई खूबियों के कारण दुनिया के इस अनोखे शहर में इसके स्मार्ट बनने के बाद बहुत कुछ बदल जाएगा। कहा तो यही जा रहा है कि काशी की संस्कृति, परंपरा को जीवंत रखते हुए आधुनिकता का खाका खींचा जाएगा। विकास के कुल 21 बिंदुओं को ध्यान में रखते हुए शहर को स्मार्ट बनाया जाएगा। लगे हाथ क्योटो और बनारस की तुलना करें तो बनारस में जहां हर साल 50 लाख पर्यटक आते हैं, वहीं क्योटो में पांच करोड़ पर्यटक पहुंचते हैं। क्योटो में हजारों धार्मिक स्थल हैं, तो बनारस मंदिरों का शहर ही कहा जाता है। दोनों शहरों में यूं तो कई समानताएं हैं लेकिन, क्योटो को आधुनिक रूप उसकी सांस्कृतिक विरासत को पूरी तरह संरक्षित रखते हुए दिया गया है। देखना होगा कि क्या बनारस को भी वही रूप हासिल हो पाएगा या केवल स्मार्ट ही बन पाएगा।

> बनारस में जहां हर साल 50 लाख पर्यटक आते हैं, वहीं क्योटो में पांच करोड़ पर्यटक पहुंचते हैं

कह के रहेंगे

माधव जोशी

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या आप मानते हैं कि देश में निजी स्कूलों के नियमन की उचित व्यवस्था है?

आज का सवाल

क्या रेयान इंटरनेशनल स्कूल के छात्र प्रद्युम्न की हत्या की सीबीआइ जांच होनी चाहिए?

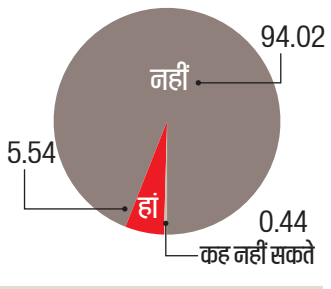

अपनी राय और अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए अपने मोबाइल के मैसेज बॉक्स में जाकर **POLL** लिखें, स्पेस देकर **Y, N** या **C** लिखकर 57272 पर भेजें
Y -हां, **N**-नहीं, **C**-कह नहीं सकते

परिणाम एसएमएस से प्राप्त नतीजों के साथ जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

रोजगार के अवसर बढ़ाने के उपाय

डॉ. भरत झुनझुनवाला

संगठित क्षेत्र में रोजगार बढ़ाने के ख्वाब देखने के बजाय सरकार को सेवा क्षेत्र में बाजार के विस्तार के लिए बुनियादी संरचना उपलब्ध करानी चाहिए

रोजगार सृजन के लिए सरकार ने एक कार्यबल यानी टास्क फोर्स का गठन किया है। कृषि में ट्रैक्टर, हार्वेस्टर और ट्यूबवेल के उपयोग से श्रम की जरूरत कम हो गई है इसलिए सामान्य कृषि उत्पादों जैसे गेहूं और गन्ने का उत्पादन बढ़ाने से रोजगार पैदा नही होंगे, बल्कि इनका उत्पादन बढ़ाने से पर्यावरण का क्षय होगा और रोजगार कम होंगे। जैसे गन्ने की खेती के लिए ट्यूबवेल के अधिक उपयोग से गांव के तालाब सूख जाते हैं और इसके चलते मछली पालन में बन रहे रोजगार समाप्त हो जाते हैं। हालांकि महंगे कृषि उत्पादों के जरिये जरूरी रोजगार के अवसर बन सकते हैं। जैसे तरबूज को अगर चौकोर आकार का बनाना हो तो छोटे फल को चौकोर डिब्बों में डालना होता है। फल बड़ा होने के साथ क्रमशः बड़े डिब्बे लगाने होते हैं। ऐसे तरबूज का दाम ज्यादा मिलता है और उसके उत्पादन से रोजगार के अवसर भी बनते हैं। अतः उच्च कीमत के कृषि उत्पादों की तरफ बढ़ना चाहिए। हमारे पास हर प्रकार की जलवायु उपलब्ध है। जैसे गुलाब के फूल गर्मी में पहाड़ों पर, बरसात में दक्कन के पठार पर और जाड़े मे उत्तर प्रदेश में उगाए जा सकते है। सरकार को चाहिए कि उच्च कीमत के ऐसे कृषि उत्पादों के निर्यात पर सब्सिडी दे। वर्तमान में जैसे उर्वरक और बिजली पर दी जा रही सब्सिडी को इस दिशा मे मोड़ने से किसान पर कुल भार नही बढ़ेगा, परंतु उसकी दिशा का परिवर्तन होगा।

विनिर्माण में भी कमोबेश ऐसी ही परिस्थिति है। बड़ी कंपनियां ऑटोमेटिक मशीनों से उत्पादन करती हैं। उनके जरिये रोजगार सृजन कम ही हो रहा है। इसलिए बहुराष्ट्रीय कंपनियां जैसे एप्पल द्वारा भारत में आई-फोन बनाए जाने से भारत का तकनीकी उन्नयन अवश्य होगा, परंतु रोजगार के अवसर नहीं बनेंगे। वैश्विक अनुभव बताता है कि विनिर्माण में अधिकतर रोजगार छोटे उद्योगों द्वारा बनाए जाते हैं, लेकिन छोटे उद्योगों का दायरा भी सिकुड़ता जा रहा है। जैसे पहले हर शहर मे डबलरोटी बनाने की फैक्ट्री होती थी। आज बड़े शहरों से डबलरोटी गांवों मे भी सप्लाई हो रही है। अब तक सरकार की सोच थी कि किसी विशेष क्षेत्र में कार्यरत तमाम छोटे उद्योगों को एक समूह में स्थापित किया जाए जैसे तिरुपुर में होजरी फैक्ट्रियों को। इन्हे सामूहिक स्तर पर प्रदूषण नियंत्रण सुविधाएं उपलब्ध कराई जा सकती है जिससे इनकी उत्पादन लागत में कमी आए और ये बड़े उद्योगों के सामने खड़े रह सकें। बहरहाल जमीनी अनुभव बताता है कि छोटे उद्योग पिट रहे हैं। तिरुपुर के एक छोटे होजरी निर्माता ने बताया कि जीएसटी लागू होने के बाद अहमदाबाद के बड़े उद्योगों के सामने वह पिट रहा है। सरकार को इस भ्रम से उबरना चाहिए कि संरक्षण के बिना छोटे उद्योगों का अस्तित्व बचा रहेगा और उनके द्वारा मुफ्त में नए रोजगार अवसर सृजित होंगे। देश को रोजगार का मूल्य अदा करना होगा। इस दिशा में श्रम-सघन छोटे उद्योगों को संरक्षण देने की पुरानी नीति पर वापस जाना होगा। जैसे ऑटोमेटिक मशीनों से बने कागज और पावरलूम से बने कपड़े पर देश में प्रतिबंध लगा दिया जाए तो हस्तनिर्मित कागज एवं हैंडलूम के उत्पादन में रातोंरात करोड़ों रोजगार उत्पन्न हो जाएंगे, परंतु इस कदम को उठाने के लिए सरकार को बड़े कागज एवं कपड़ा निर्माताओं का सामना करने का साहस जुटाना होगा। देश के नागरिकों को भी हस्तनिर्मित महंगा कागज एवं कपड़ा खरीदना होगा।

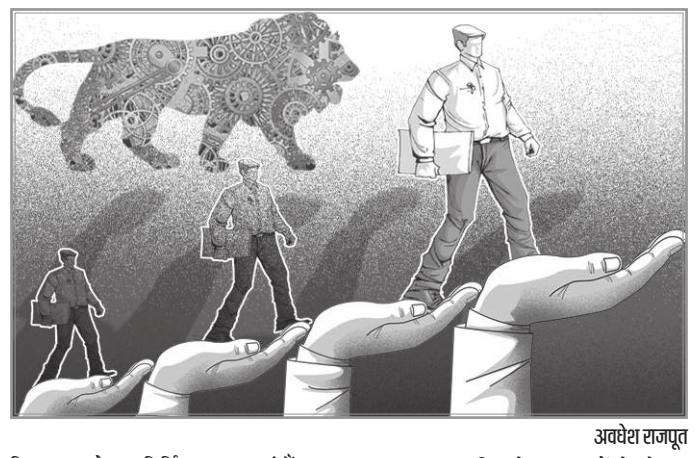

अवधेश राजपूत

आने वाले समय में सॉफ्टवेयर, एप्प आदि के बाजार का विस्तार होगा। इन इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं के उत्पादन में भी बड़ी कंपनियों द्वारा रोजगार के अवसर कम ही सृजित होंगे। इनके द्वारा आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग बढ़ चढ़ कर होगा, लेकिन स्वतंत्र युवाओं द्वारा इनका उत्पादन किया जा सकता है। जैसे डॉक्युमेंट्री अथवा कंप्यूटर गेम्स को युवा अपने मोबाइल पर बना सकते हैं। इन वस्तुओं के उत्पादन से भारी संख्या में रोजगार बन सकते हैं। जैसे किसी युवा की क्षमता है कि पंचतंत्र की कहानियों का एप्प बना सके। महिलाएं भी ऐसे एप्प खरीदने को तैयार हैं, परंतु एप्प बनाने एवं खरीदने वाले के बीच की खाई को हम पार नही कर पा रहे हैं। सरकार को चाहिए कि इस खाई को पार करने का पोर्टल बनाए। साथ ही साथ अलग पुलिस व्यवस्था बनाए जिससे जालसाजों से परेशान होकर खरीदार भाग न जाए। मैंने 128 जीबी की पेन ड्राइव किसी पोर्टल से खरीदी। मिली 8 जीबी की। पोर्टल ने हाथ खड़े कर दिए। ऐसे में अलग पुलिस होनी चाहिए जो कि मदद करे तभी इस बाजार का विस्तार होगा।

आने वाले वक्त में सेवाओं के नए बाजार बनेंगे। इंटरनेट के चलते दुनिया भर के लोग एक दूसरे से जुड़ रहे है। वे दूसरे देशों और भाषाओं की जानकारी चाहते हैं। हमें हिंदी और अंग्रेजी से आगे जाना होगा। इसी प्रकार कानूनी रिसर्च, ऑनलाइन सर्वे, ऑनलाइन पोषण की सलाह देना, इत्यादि तमाम नए ई-उत्पादों के बाजार बनेंगे। इन सेवाओं के लिए भी सरकार को ई-पोर्टल तथा ई-पुलिस स्थापित करनी चाहिए। इन बाजारों के विस्तार के लिए लोगों को कौशल यानी स्किल सिखाने की जरूरत नहीं है। युवा स्किल हासिल कर लेंगे। स्किल के नाम पर देश में भारी फर्जीवाड़ा चल रहा है। भूखे को मछली परोसने के स्थान पर मछली पकड़ना सिखाना चाहिए। बेहतर है कि नदी तक पहुंचने का सरकार रास्ता बना दे तो भूखा मछली पकड़ना स्वयं सीख लेगा। सरकार को इन ई-सेवाओं के बाजार के विस्तार को बुनियादी संरचना उपलब्ध करानी चाहिए। मछली पकड़ना सिखाया जाए पर नदी तक पहुंचने का रास्ता उपलब्ध न हो तो वह स्किल बेकार हो जाएगी।

ई-सेवाओं का एक बड़ा बाजार स्वास्थ्य एवं शिक्षा सेवाओ का उभर रहा है। इन सेवाओं को ऑटोमेटिक मशीनों से उपलब्ध कराने की एक सीमा है। प्राइमरी स्कूल में बच्चों को रोबोट से कम ही पढ़ाया जा सकता है। भारत में स्वास्थ्य एवं शिक्षा सेवाएं उपलब्ध कराने का वैश्विक केंद्र बन सकता है। जैसे दांत मे रूट कनाल ट्रीटमेंट का दुबई मे चार्ज 2,500 दिरहम अथवा 42,000 रुपये है। तीन दांत में रूट कनाल कराना हो तो भारत आकर इसे कराना सस्ता पड़ता है। इसी प्रकार घुटना बदलने अथवा ओपन हार्ट सर्जरी का खर्च भारत में बहुत कम है, परंतु विदेशी नागरिक भारत आने में हिचकिचाते है। चूंकि यहां उन्हें अक्सर धोखा दिया जाता है। उनके लिए भारतीय पुलिस के मार्फत राहत पाना लोहे के चने चबाना है। इसलिए सरकार को चाहिए कि स्वास्थ्य एवं शिक्षा क्षेत्रों में विदेशी नागरिकों के लिए अलग पुलिस व्यवस्था बनाए जो कि विभिन्न भाषाएं बोलती हो और आगंतुक को त्वरित न्याय उपलब्ध कराए। साथ ही सरकार को स्वास्थ्य एवं शिक्षा सेवाओं के निर्यात के लिए सब्सिडी देनी चाहिए। जैसे विदेशी छात्रों द्वारा अदा की गई फीस को आय कर से मुक्त किया जा सकता है।

आने वाला युग बिल्कुल अलग प्रकार का होगा। कंपनियों मे स्थाई नौकरियां बहुत कम होंगी। सेवाओं के व्यक्तिगत स्तर पर उत्पादन एवं खपत में भारी वृद्धि होगी। संगठित क्षेत्र में रोजगार बढ़ाने के ख्वाब देखने के स्थान पर सरकार को इस बाजार के विस्तार को बुनियादी संरचना उपलब्ध करानी चाहिए।

(लेखक वरिष्ठ अर्थशास्त्री एवं आइआइएम बेंगलुरु में प्रोफेसर रहे हैं)

response@jagran.com

मजहबी रूप लेता मानवीय संकट

रामिश सिद्दीकी

मुस्लिम नेता समझें कि म्यांमार से रोहिंग्या मुसलमानों का पलायन मानवीय समस्या है, न कि मजहबी

संयुक्त राष्ट्र की 2013 में प्रकाशित एक रिपोर्ट ने रोहिंग्या मुसलमानों को विश्व के सबसे पीड़ित अल्पसंख्यक बताया है। ये ऐसे लोग हैं जिनका कोई देश नहीं। रोहिंग्या शब्द का इस्तेमाल पहली बार 1799 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने किया था। उन्हें अराकानीस भी कहा जाता है। अंग्रेज जब भारतीय उपमहाद्वीप पर काबिज थे उस समय उन्होंने बंगाल के लोगों को म्यांमार यानी तत्कालीन बर्मा के कम आबादी वाले उपजाऊ क्षेत्र अराकान जिसे आज रखाइन नाम से जाना जाता है, जाकर बसने और खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया। तत्कालीन अंग्रेज सरकार के अनुसार 1872 में उनकी संख्या लगभग 58,000 थी जो 1911 में बढ़कर 1,78,000 हो गई। आज एक अनुमान के अनुसार म्यांमार में करीब दस लाख रोहिंग्या मुसलमान हैं जिनमें से तमाम पलायन करने को विवश हुए हैं। 1948 में म्यांमार की आजादी के बाद से ही वहां यह आवाज उठी कि रोहिंग्या मुसलमानों को देश का नागरिक माना जाए, किंतु पिछले सात दशकों में म्यांमार में जिसने भी शासन किया उसने उन्हें अपने देश का नागरिक मानने से गुरेज ही किया। इसके चलते रोहिंग्या समुदाय का वहां से पलायन शुरू हुआ और वे भारत, बांग्लादेश, पाकिस्तान और विश्व के अन्य देशों में जाना शुरू हो गए। 1980 के दशक के प्रारंभ में जब म्यांमार सरकार ने नागरिक कानून पारित कर रोहिंग्या मुसलमानों को बंगाली नागरिक करार देते हुए उन्हें म्यांमार की नागरिकता देने से मना कर दिया तो उनके उत्पीड़न का सिलसिला तेज हो गया। म्यांमार में सिर्फ रोहिंग्या मुसलमान ही नहीं हैं। वहां लगभग 150 वर्ष पहले चीन से आए मुसलमान भी रहते हैं जिन्हें पंथय मुस्लिम कहा जाता है। यह मूलतः एक व्यापारी समाज है। उसने म्यांमार में खासी तरक्की की है और अपने शिक्षा स्थानों और धार्मिक स्थलों का भी निर्माण किया है। वर्षों से म्यांमार में रह रहे पंथय समुदाय को कभी असुरक्षा का अहसास नहीं हुआ, लेकिन पिछले कुछ वर्षों से रखाइन इलाके में निरंतर बिगड़ते माहौल की वजह से उन पर भी असर पड़ा है। पंथय मुस्लिम इसका जिम्मेदार रोहिंग्या मुसलमानों को मानते हैं। एक ही देश में रह रहे एक ही धर्म को मानने वाले दो समुदायों के बीच में ऐसी सोच का फर्क क्यों? पंथय मुसलमानों का मानना है कि रोहिंग्या समुदाय के कुछ लोगों द्वारा हिंसा के रास्ते पर चल निकलने के कारण उन्हें भी मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है।

म्यांमार में दशकों से चल रहे नागरिकता विवाद ने हिंसक मोड़ तब लिया जब रखाइन में रह रहे रोहिंग्या मुसलमानों में से कुछ ने अराकान रोहिंग्या मुक्ति सेना यानी एआरएसए बनाकर म्यांमार सेना के विरुद्ध हथियार उठा लिए। आज दुनिया भर के मानवाधिकार संगठनों ने म्यांमार सरकार के विरुद्ध आवाज उठा रखी है, लेकिन यही संगठन तब मौन हो जाते हैं जब वहां की सेना के ठिकानों पर एआरएसए के हथियारबंद दस्ते हमले करते हैं। एआरएसए के संबंध कई जेहादी आतंकी संगठनों से माने जाते हैं और शायद यही कारण है कि म्यांमार से पलायन कर रहे रोहिंग्या मुसलमानों को मलेशिया और इंडोनेशिया भी शरण देने के लिए तैयार नहीं। कोई भी धर्म या किसी देश का कानून मानवता का संहार करना नहीं सिखाता। इसी तरह कोई भी धर्म यह भी नहीं सिखाता कि जिस देश में आप रह रहे हैं वहां के शासक अगरआपकी बात न सुनें तो आप उसकी सेना पर ही हमला बोल दें।

इस्लाम के इतिहास में प्रवासियों का जो सबसे पहला किस्सा पढ़ने को मिलता है वह हजरत मुहम्मद साहब के समय का है। एक समय मक्का शहर में हजरत मुहम्मद साहब और उनके साथियों का रहना दूभर हो गया था। ऐसे हालात में उन्होंने अपने कुछ साथियों को इथियोपिया जाने का निर्देश दिया जो उस समय एक ईसाई देश था। हजरत मुहम्मद साहब के साथी जब वहां गए तो उन्होंने वहां के शासक के आगे कभी कोई मांग नहीं रखी, बल्कि शांतिपूर्वक अपना जीवनयापन करने लगे। जब एक पड़ोसी देश ने इथियोपिया पर आक्रमण किया तब हजरत मुहम्मद साहब के इन साथियों ने दुआ मांगी कि खुदा इथियोपिया की सेना को कामयाबी दे। जब वह कामयाब हो गई तो उन्होंने सामूहिक जश्न मनाया।

देश-विदेश के मुस्लिम नेताओं ने रोहिंग्या की समस्या को इस्लामिक समस्या का रूप दे दिया है। वे यह आवाज उठा रहे हैं कि रोहिंग्या मुसलमानों के साथ जो हो रहा है उससे संपूर्ण मुस्लिम जगत चिंतित है। ऐसी आवाज उठाने वालों में तुर्की के राष्ट्रपति एर्दोगन सबसे ज्यादा सक्रिय हैं। इंसानों की मदद करना मानवता की बड़ी खूबी है, लेकिन हर समस्या पर मजहबी लेवल लगा देना इंसानी मूल्यों के खिलाफ है। रोहिंग्या मुसलमानों का पलायन मानवीय समस्या है न कि मजहबी। आज दुनिया में दो विचारधाराएं दिखती हैं। एक वह जो हर चीज को मजहबी रंग में देखती है और दूसरी वह जो हर बात को मानवता के नजरिये से देखती है। इन दो विचारधाराओं के बीच का अंतर सीरियाई शरणार्थियों के मामले में भी देखने को मिलता है। एक तरफ वे मुस्लिम देश हैं जो इन शरणार्थियों को मुस्लिम होने के कारण अपने यहां शरण दे रहे हैं और दूसरी तरफ यूरोप के वे अनेक देश जो मुस्लिम देश नहीं हैं और फिर भी सीरियाई शरणार्थियों को शरण दे रहे हैं। वे उन्हें मुस्लिम होने के कारण नहीं, बल्कि इंसानियत के नाते शरण दे रहे हैं।

भारत में म्यांमार से आए रोहिंग्या मुस्लिम बड़ी संख्या में रह रहे हैं। इनमें से कुछ बहुत पहले आए थे और कुछ हाल के समय में आए हैं। हैरानी की बात यह है कि उनका गैर कानूनी ढंग से भारत में आना लगा रहा और फिर भी किसी ने उनके प्रवेश को रोकने की जरूरत नहीं समझी और आज जब सरकार उन्हें निकालना चाहती है तो कई लोग विरोध में खड़े हो गए हैं और कुछ तो सुप्रीम कोर्ट भी पहुंच गए हैं। सुप्रीम कोर्ट का फैसला कुछ भी है, यह अधिकार भारत सरकार का है कि वह किसे अपने यहां शरण दे और किसे नहीं? अभी हालात ऐसे नहीं दिखते कि रोहिंग्या मुसलमानों को कहीं भेजा जा सके, क्योंकि उन्हें कोई देश लेने को तैयार नहीं। म्यांमार से रोहिंग्या मुसलमानों के पलायन की समस्या एक मानवीय समस्या है जिसे सभी देशों को मिलकर सुलझाना चाहिए। इस समस्या के समाधान के लिए यह भी जरूरी है कि रोहिंग्या मुसलमान हिंसा के रास्ते पर चलना छोड़ें। उन्हें यह देखना होगा कि जबसे उन्होंने हथियार उठाए हैं तबसे उनकी समस्या बढ़ी है और वे सभी देशों और यहां तक कि मुस्लिम देशों के लिए भी अवांछित हो गए हैं।

(लेखक इस्लामी मामलों के जानकार हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

सौभाग्य और दुर्भाग्य

सौभाग्य का सुख और दुर्भाग्य का दुख जीवन के दो पहलू हैं। जीवन इन्हीं दो पहियों से गति करता है। सौभाग्य का तात्पर्य है-विगत समय में किए गए सत्कर्मों का परिणाम और दुर्भाग्य का अर्थ है-बीते काल के सभी दुष्कर्मों की परिणति। सौभाग्य सूर्योदय की अरुणिम आभा के समान उदित होता है जो पक्षियों के कलरव के समान मंद-मधुर संगीत के सुरों से झंकृत होता है, परंतु दुर्भाग्य अस्ताचलगामी सूर्य के सदृश्य होता है जो देखते-देखते आसमान में विलीन होकर कालिमा की मोटी चादर ओढ़ा जाता है। सौभाग्य के आगमन में आहट होती है, परंतु दुर्भाग्य दबे पैर चला आता है। जब कुछ अच्छा घटने वाला होता है तो उसकी पूर्व सूचना मिल जाती है। मन में खुशी की तरंग फैल जाती है, एक नई ताजगी का अहसास होता है, हृदय पुलकित होने लगता है, भावनाओं में अनेक रंग घुलने लगते हैं। यह सब सौभाग्य अर्थात निकट भविष्य में कुछ शुभ होने का संकेत होता है, परंतु दुर्भाग्य का फंदा कब गले पड़ जाता है, पता ही नहीं चलता और जब पता चलता है तब गले में फंदा पड़ चुका होता है।

दुर्भाग्य का उदय और इसके बाद उसका परिदृश्य दोनों ही भीषण होते हैं। दुर्भाग्य पूर्व सूचना और पूर्व संकेत दिए बगैर आता है। ऐसा इसलिए, क्योंकि विगत कर्मों की परिणति को भोगना जो है। अगर यह भी आहट देकर आए तो फिर व्यक्ति सजग-सतर्क नहीं हो सकेगा। सामान्य जन सौभाग्य के राग-रंग में इतने मदमस्त हो जाते हैं कि यह सब कब हो जाता है पता नहीं चलता। सौभाग्य के पल में लगता है कि ऐसा सुंदर और मनभावन पल कभी खत्म नहीं होगा। जीवन इसी तरह ही गुजर जाएगा, इसी बीच दुर्भाग्य की काली रेखाएं जब चुपके से बांधने लगती हैं तो लगता है कि एकाएक यह क्या हो गया। जीवन को आर-पार देखने वाले पारदर्शी महापुरुष कभी भी चैन की नींद नहीं सोते। उनके जीवन में सौभाग्य काल आता अवश्य है, परंतु वे इसमें मदमस्त नहीं होते। इस काल को वे गहन तपस्या और सेवा आदि उत्कृष्ट कार्यों में लगाते हैं, क्योंकि उन्हें पता रहता है कि सौभाग्य की आड़ में दुर्भाग्य झांकता रहता है और वह जीवन में दाखिल होकर कभी भी दखल दे सकता है। इसी प्रकार सामान्य व्यक्ति को भी दुर्भाग्य को जीत करके सौभाग्य प्राप्त कर लेने का प्रयास करना चाहिए।

डॉ. सुरचना त्रिवेदी

पाठकनामा

pathaknama@nda .jagran.com

लोकतांत्रिक विद्रूपता

विचारधाराओं में हिंसक टकराव शीर्षक से लिखे अपने लेख में संजय गुप्त ने यह ठीक ही कहा है कि वर्तमान में राजनीतिक वैचारिक विरोध सहनशीलता की सीमा को अतिक्रमित कर जिस तरह से हिंसात्मक होता जा रहा है, वह स्वस्थ लोकतंत्र के लिए घातक है। लेकिन वैचारिक विरोध की इस विद्रूपता के लिए वर्तमान का दूषित राजनीतिक परिवेश ही जिम्मेदार है। कर्नाटक में पत्रकार गौरी लंकेश की दुर्भाग्यपूर्ण हत्या पर जितनी हायतौबा मच रही है, काश वैसी ही हायतौबा केरल में संघ के स्वयंसेवकों की निर्मम हत्याओं पर भी मचाई गई होती तो वैचारिक प्रतिशोधवश होने वाली हिंसा दर हिंसा का यह दुर्भाग्यपूर्ण दौर थम सकता था। भारत जैसे बड़े लोकतांत्रिक देश में वैचारिक विरोध पनपना स्वाभाविक है, लेकिन अपने वर्चस्व के लिए वैचारिक विरोधियों की जघन्य हत्या करना वैचारिक प्रतिशोध की पराकाष्ठा है। भारतीय लोकतंत्र के लिए घातक इस हिंसक टकराव से बचने की जरूरत है, नहीं तो लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का महत्व ही समाप्त हो जाएगा। निःसंदेह जब पारस्परिक वैचारिक विरोध प्रतिशोधवश हिंसात्मक हो जाता है तो यह लोकतंत्र को विद्रूप बनाने का काम करता है। आज गौरी लंकेश या संघ के स्वयंसेवकों की दुर्भाग्यपूर्ण हत्याएं इसी लोकतांत्रिक विद्रूपता को रेखांकित कर रहीं हैं, जो राष्ट्रहित में नहीं है।

डॉ. विष्णु प्रकाश पाण्डेय, अलीगढ़

स्कूल बरतें सावधानी

गुरुग्राम के रेयान इंटरनेशनल स्कूल में मासूम छात्र के साथ कुकर्म की कोशिश और उसके बाद उसकी बेरहमी से की गई हत्या को अभी चंद घंटे ही बीते थे कि एक और स्कूल में दुष्कर्म की घटना ने मानवता को शर्मसार कर दिया। दिल्ली के एक स्कूल में सिक्योरिटी गार्ड ने पांच साल की एक बच्ची के साथ दुष्कर्म किया। स्कूल से आने के बाद, तबियत खराब होने पर बच्ची ने इस घटना के बारे में परिजनों को बताया। बच्ची अस्पताल में भर्ती है। इन दोनों ही घटनाओं में स्कूल से जुड़े लोग दोषी हैं। ऐसे लोगों की पहचान कैसे की जाए? इनके अंदर के वहशीपन को कैसे पहचाना जाए? इस तरह के लोगों को पहचानना मुश्किल है। मगर स्कूल प्रशासन अगर थोड़ी सी सावधानी बरते तो ऐसी घटनाओं पर कुछ अंकुश लग सकता है।

कनिका कृष्ण, आइआइएमसी, दिल्ली

उन सपूतों का भी श्राद्ध

हिंदू मान्यता में आश्विन महीने का कृष्ण पक्ष पितृ पक्ष के नाम से जाना जाता है और यह पितरों के लिए समर्पित होता है। अपने -अपने पूर्वजों को तो सभी स्मरण करते हैं, लेकिन भारत को भी मां कहा जाता है, इसलिए भारत को अंग्रेजों से आजाद कराने वाले इसके सपूतों के लिए भी एक दिन श्राद्ध करना चाहिए। इसके साथ ही 125 वर्ष पहले स्वामी विवेकानंद ने 11 सितंबर को शिकागो में विश्व धर्म सम्मलेन में एक ऐतिहासिक भाषण दिया था। बेहतर होता कि केंद्र सरकार स्वामीजी के उस ऐतिहासिक भाषण को न्यूज चैनलों और आकाशवाणी से एक राष्ट्रीय संदेश के रूप में प्रसारित कराती। अपने मन की बात की जगह आज के दिन स्वामीजी के भी मन की बात हो जाती तो कोई भी राजनीतिक विरोधी तुष्टिकरण या ध्रुवीकरण का आरोप नहीं लगता। स्वामीजी ने उस धर्म सम्मलेन में मूलतः भारत का ही प्रतिनिधित्व किया था और आज सारे राजनीतिक दलों के नेता और समर्थक भी मूलतः भारतीय ही हैं।

drmanojdublish@gmail.com

साधु नहीं, शैतान बाबा!

गुरमीत सिंह उर्फ राम-रहीम के अत्याचारों, दुराचारों व झूठे चमत्कारों के नित्य आ रहे मामलों से ज्ञात हो रहा है कि सच्चा डेरा सौदा का मुखिया कोई बाबा नहीं, बल्कि डॉन था। 700 एकड़ से भी ज्यादा क्षेत्र में फैले डेरे में बनी अय्याशी की गुफा साध्वियों के निवास व बालिकाओं के छात्रावासो से जुड़ी है। इस गुफा की दीवारें भी अबलाओं की चीखों की गवाह होंगी जो चीख -चीख कर कहती होंगी कि यह कोई साधु नहीं, शैतान है। संत के चोले में आस्थाओं की फसल उगा कर उन्हें उजाड़ने वाला साधु कैसे हो सकता है? वर्षो पहले एक फिल्म आयी थी, साधु और शैतान। इसमें भी दोनों पात्र अलग- अलग पुण्य और पाप कर्म करते हुए दिखाए गए थे, परंतु गुरमीत सिंह ने तो दोनों भूमिकाओं को स्वयं निभा कर फिल्म जगत को भी चकित कर दिया। दिन प्रतिदिन गुरमीत के बुरे कार्यों के रहस्य खुल रहे हैं, वह अत्यंत आक्रोशित व आश्चर्यचकित करने वाले हैं। इस दुराचारी बाबा ने भक्तों की आस्था को चोट पहुंचाकर एक संत के चोले को तार- तार कर दिया है। यह श्रद्धालुओं के साथ विश्वासघात की पराकाष्ठा है। सामान्य रूप से धर्म के प्रति आशावान व आस्थावान होना एक सामान्य व्यक्